शोध मंथन Vol. XIV No.III June-Sep. 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

भारतीय समाज में संयुक्त परिवार का निरंतर परिवर्तित स्वरूप, समस्याएं एवं चुनौतियां : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्राप्तिः 23.08.2023
स्वीकृतः 17.09.2023

66

प्रो० ममता सागर
समाजशास्त्र विभाग
एस०एम०पी०एम० पी०जी० कॉलेज
माधवपुरम, मेरठ

इन्दु
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग
एस०एम०पी०एम० पी०जी० कॉलेज
माधवपुरम, मेरठ
ईमेलः *indub5386@gmail.com*

सारांश

समस्त मानव समूह में परिवार एक महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है। इसके सदस्य आपस में रक्त या विवाह संबंधों द्वारा संबंध रखते हैं और एक भावनात्मक बंधन के अंतर्गत एक दूसरे से बंधे रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में परिवार एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करता है। प्राणीशास्त्रीय आधार पर समूहों में परिवार सबसे छोटी इकाई है। परिवार समाज रूपी भवन में कोने का पत्थर है यह सामाजिक संगठन की मौलिक इकाई है। परिवार के अभाव में मानव समाज के संचालन की कल्पना भी करना कठिन है, प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी परिवार का सदस्य रहा है या अभी भी है। "समाज में परिवार ही अत्यधिक महत्वपूर्ण समूह है"। परिवार वह समूह है जहाँ व्यक्ति अपने सामाजिक जीवन की मौलिक बातों को सीखता है। मानव की समस्त सामाजिक संस्थाओं में परिवार एक आधारभूत और सर्वव्यापी सामाजिक संस्था है। संस्कृति के सभी स्तरों में चाहे उन्हें उन्नत कहा जाए या निम्न किसी न किसी प्रकार का पारिवारिक संगठन अनिवार्यतः पाया जाता है। स्त्री एवं पुरुष दोनों ही परिवार के मूल हैं, नदी के दो तटों के समान हैं, जिनके बीच जीवन रूपी धारा का लगातार प्रवाह हो रहा है। परिवार नए प्राणियों को जन्म देकर मृत्यु से रिक्त होने वाले स्थानों को भरता है तथा समाज में निरंतरता बनाए रखता है। यही कारण है परिवार मानव के साथ प्रारंभ से ही है।

मैलिनोवस्की भी कहते हैं कि परिवार ही एक ऐसा समूह है जिसे मनुष्य पशु अवस्था से अपने साथ लाया है।

मरडाक ने 250 आदिम समाजों का अध्ययन करने पर पाया है कि कोई भी समाज ऐसा नहीं था जिसमें परिवार रूपी संस्था की अनुपस्थिति हो।

मुख्य बिन्दु

समाज, परिवार, हिन्दु, संयुक्त।

प्रस्तावना

संयुक्त परिवार प्रणाली भारत में अति प्राचीन है। हिंदू समाज की इकाई व्यक्ति न होकर संयुक्त परिवार है।

भारतीय सामाजिक संरचना की एक विशेषता के रूप में संयुक्त परिवार का प्राचीन काल से ही महत्त्व रहा है। हिंदुओं के अलावा अन्य धर्म के लोगों में भी संयुक्त परिवार की पारिवारिक व्यवस्था पाई जाती रही है, भारत में परिवार का शास्त्रीय स्वरूप संयुक्त परिवार रहा है।

संयुक्त परिवार ऐसे परिवार हैं जिनमें कई पीढ़ी के लोग एक साथ निवास करते हैं अथवा एक ही पीढ़ी के सभी भाई अपनी पत्नियों, विवाहित बच्चों तथा अन्य संबंधियों के साथ सामूहिक रूप से निवास करते हैं, जिनकी संपत्ति सामूहिक होती है। परिवार के सभी सदस्य भोजन, उत्सव, त्यौहार और पूजन में सामूहिक रूप से भाग लेते हैं और परस्पर अधिकारों और कर्तव्यों से बंधे होते हैं।

विभिन्न विद्वानों ने संयुक्त परिवार की विविध संकल्पना की हैं जहाँ इरावती कर्वे संयुक्तता में सह–निवासिता को महत्वपूर्ण मानती हैं, वही हैरोल्ड गूल्ड, राम कृष्ण मुखर्जी, एस सी दुबे, कोहेन, कोलेण्डा सह–निवासिता और सहभोज को संयुक्त परिवार के आवश्यक तत्व नहीं मानते हैं। बेली और टी० / एन मदान निवास और सहभोज के भेदभाव के बिना संपत्ति के संयुक्त स्वामित्व को महत्त्व देते हैं।

आई पी देसाई दायित्वों की पूर्ति को महत्त्व देता है, भले ही निवास अलग हो और संपत्ति का संयुक्त स्वामित्व न हो। इरावती कर्वे के अनुसार– परम्परागत प्राचीन भारतीय परिवार (वैदिक और महाकाव्य युग) निवास, संपत्ति और कार्यों में संयुक्त था, उसने संयुक्त परिवार की पांच विशेषताएं बताई–

सह–निवास, सह–रसोई, सह–संपत्ति, सह–परिवार पूजा, नातेदारी संबंध।

संयुक्त परिवार व्यक्तियों का वह समूह है जो सामान्यतः एक ही छत के नीचे रहते हैं, एक चूल्हे पर पका भोजन करते हैं, संपत्ति में समान हिस्सा रखते हैं, पारिवारिक पूजा अर्चना में समान रूप से भाग लेते हैं और एक दूसरे से किसी प्रकार के बंधु संबंध रखते हैं।

एम० एन० श्रीनिवास ने संयुक्त परिवार की संरचना को अपनी पुस्तक "रिलिजन एंड सोसायटी अमंग दी कुर्ग इन साउथ इंडिया" में विस्तृत रूप कहा है कि कुर्ग समाज में संयुक्त परिवार को ओक्का कहते हैं। ओक्का के सदस्य जन्म से संयुक्त होते हैं यह सदस्य आपस में रक्त संबंधी होते हैं। पूर्वजों की संपत्ति पर ओक्का मे पुत्रों का अधिकार होता है। जिस तरह के संयुक्त परिवार को श्रीनिवासन ने कुर्ग लोगों में पाया है, वह आज तीव्रता से बदल रहा है। सामाजिक परिवर्तन के इस दौर में संयुक्त परिवार की संरचना शीघ्रता से बदल रही है।

लुसी मेयर– परिवार एक गृहस्थ समूह है जिसमें माता पिता और संतान साथ–साथ रहते हैं इसके मूल रूप में दम्पत्ति और उसकी संतान रहती है।

आई पी देसाई– हम उस गृह को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें एकाकी परिवार से अधिक पीढ़ियों के सदस्य रहते हैं और जिसके सदस्य एक दूसरे से संपत्ति आय और पारस्परिक अधिकारों तथा कर्त्तव्यों द्वारा संबद्ध हो।

जोली— एक संयुक्त परिवार में न केवल माता—पिता एवं बच्चे—भाई तथा सौतेले भाई साझी संपत्ति पर निर्वाह करते हैं अपितु इसमें कभी—कभी कई पीढ़ियों के सगोत्र संबंधी एवं पूर्वज भी शामिल हैं।

परिवार के प्रकार

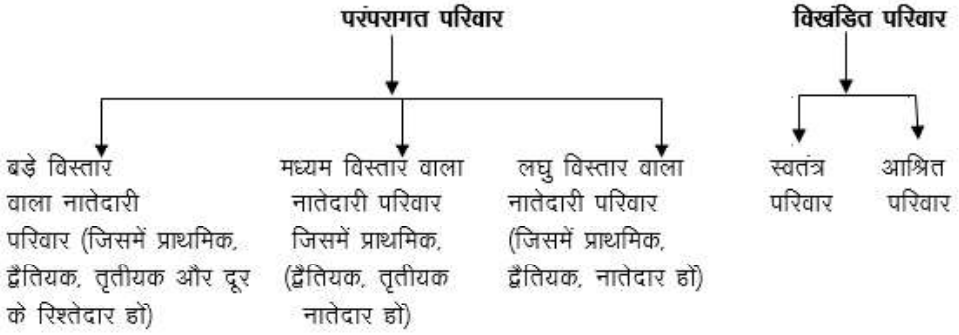

संयुक्त परिवार की विशेषताएं एवं प्रकार्य

भारत की संयुक्त परिवार की प्रणाली इस तरह के परिवार का सर्वोत्तम उदाहरण है। परिवार की संरचना मात्र इसके समूहगत स्वरूप, जिसमें पति—पत्नी, बच्चे तथा उनके संबंधित साथ रहते हैं, से ही नहीं समझी जा सकती। परिवार एक संस्था के रूप में भावनात्मक संबंधों, सामाजिक मूल्यों, रीति—रिवाजों तथा परंपराओं से भी मिलकर बनता है। ये तत्व परिवार को स्थायित्व और निरंतरता प्रदान करते हैं। भारतीय समाज में संयुक्त परिवार महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जैसे शासन संबंधी धार्मिक कार्य, मार्गदर्शन, बच्चों के लालन पालन में योगदान, धन का उचित प्रयोग, श्रम विभाजन, संस्कृति की रक्षा, संकट का बीमा, अनुशासन एवं नियंत्रण, राष्ट्रीय एकता एवं देश प्रेम तथा सामाजिक सुरक्षा भी संयुक्त परिवार प्रदान करता है।

संयुक्त परिवार पर समाजशास्त्रीय अध्ययन

परंपरागत भारतीय संयुक्त परिवार में अनेक परिवर्तन हुए हैं और यह संक्रमण के काल से गुजर रहा है, नवीन परिस्थितियों के कारण संयुक्त परिवार में होने वाले परिवर्तनों को कुछ विद्वानों ने विघटन माना है।

संयुक्तता में परिवर्तन को हम दो स्तरों पर संरचनात्मक एवं अंतरक्रियात्मक देख सकते हैं। कई विद्वानों ने अपने–अपने अध्ययनों में संयुक्तता को एकात्मता या एकल परिवार की तरफ जाते हुए देखा है। जो निम्नलिखित हैं:–

1 **आई पी देसाई** (1964:41) ने 1955 में शहरी परिवारों का गुजरात में महुआ नगर में अध्ययन किया और पाया कि एकलता बढ़ रही है, संयुक्तता घट रही है। व्यक्तिवाद की भावना में बढ़ोतरी के साथ ही साथ नातेदारी संबंधों का दायरा भी छोटा होता जा रहा है।

2 **कपाड़िया** (1956:112) ने 1955 गुजरात में नवसारी शहर और आसपास के 15 गांवों के शहरी 18% और ग्रामीण 82% परिवारों का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि ग्रामीण समुदाय में संयुक्त परिवारों का अनुपात लगभग उतना ही है जितना कि एकल परिवारों का एवं जाति के दृष्टिकोण से गांव में उच्च जातियों में प्रमुखता से संयुक्त परिवार हैं जबकि निम्न जातियों में एकल परिवार अधिक है। इनके अनुसार ग्रामीण एवं शहरी परिवार स्वरूपों में अंतर आर्थिक कारकों द्वारा जाति स्वरूपों के परिवर्तन का परिणाम है।

3 **ए एम शाह** (1955–1958) के बीच गुजरात में एक गांव में परिवारों का अध्ययन किया था। परिवारों का वर्गीकरण सरल एवं पैतृक परिवार पूर्ण या आंशिक हिस्से का बना हुआ है। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि एक तिहाई परिवार मिश्रित और दो तिहाई सरल थे जो ग्रामीण भारत में संयुक्त परिवार प्रथा के टूटने की प्रक्रिया की ओर संकेत करता है।

4 **एम एस गौरे** : 1960 ने दिल्ली शहर एवं ग्रामीण क्षेत्रों में, हरियाणा में रोहतक एवं हिसार जिलों के एक सीमावर्ती भागों में अध्ययन किया और इन्होंने दो प्रकार के परिवार पाए–एक पति–पत्नी और विवाहित बच्चों वाला परिवार दूसरा पति पत्नी अविवाहित व विवाहित पुत्र जो सभी जगह प्रमुख थे इनके अध्ययन अनुसार संरचनात्मक परिवर्तन स्पष्ट नहीं होते हैं।

5 **सच्चिदानंद** 1977 ने बिहार के जिले शाहबाद के 30 परिवारों का अध्ययन किया। इन्होंने अपने अध्ययन के दौरान पाया कि एक चौथाई परिवार एकल थे और करीब तीन चौथाई संयुक्त, जो पारंपरिक परिवारों की प्रधानता को दर्शाता है। उन्होंने बताया कि मध्यम एवं निम्न जातियों की अपेक्षा उच्च जातियों में एकल परिवारों की संख्या अधिक थी।

6 **पाउलीन को लेन्डा** (1968) ने 1960 और 1970 के दशक के बीच किए गए 26 अध्ययनों में से आंकड़ों का अध्ययन किया और बताया कि अधिकतर परिवार एकल हैं और इन्होंने अपने अध्ययन में कहा कि संयुक्त परिवारों के अनुपात में क्षेत्रीय अंतर मिलता है मध्य भारत एवं पूर्वी भारत (पश्चिम बंगाल सहित) की अपेक्षा गंगा के मैदान में संयुक्त परिवार अधिक अनुपात में हैं। संयुक्त परिवार निम्न तथा भूमिहीन जातियों की अपेक्षा उच्च और भूमिधर जातियों में अधिक है तथा जाति संयुक्त परिवारों के आकार और अनुपात में गहन रूप से संबंधित है।

7 **निधि कोतवाल और भारती** ने अपने अध्ययन में बताया कि एकल माताओं के सामने आने वाली सामाजिक, आर्थिक, भावनात्मक स्थितियाँ जिसमें वित्तीय समस्याएं भी थीं।

अनेक विद्वानों एवं समाजशास्त्रियों के अनुसार भारत में संयुक्तता (संयुक्त परिवार) की जगह एकाकी परिवारों में तब्दील किया है अब परिवार एकाकी से भी अलग होकर एकल माता पिता में परिवर्तित हो रहे हैं।

कैथलीन कफ व मिकी मैरियट (1955:44) और रूथ एन्सन (1949:94) समकालीन परिवार में न केवल एकाकी बल्कि संयुक्त परिवार में एक पीढ़ी से अधिक यानी दूसरी पीढ़ी दादा का अधिकार समाप्त हो गया है। अब अधिकार कुलपिता से माता–पिता में निहित हो गए हैं जो बच्चों के बारे में निर्णय लेने से पहले उनसे परामर्श अवश्य लेते हैं।

रॉस (1961:93) इन्होंने भी माना है कि अब दादा दादी उतने प्रभावी नहीं रहे जितनी अपेक्षा की जाती है।

एम0 एस0 गोरे ने भी पाया कि (1968:131) अब माता–पिता ही बच्चों को स्कूल भेजने के विषय में तथा व्यवसाय विवाह आदि के विषय में स्वयं निर्णय लेते हैं तथा बच्चे भी अपने माता–पिता के साथ मिलकर अपनी समस्याओं पर चर्चा करते हैं तथा साथ ही साथ अपने माता–पिता का विरोध भी करते हैं।

कपाड़िया (1966:323) और मार्ग्रेट कोर्मेक (1969) ने भी पाया कि बच्चे अब अधिक आजाद है। कुछ वैधानिक उपायों ने भी बच्चों को अधिकार मांगने की शक्ति दी है।

संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमान व समस्या एवं चुनौतियां

परिवर्तन की विभिन्न शक्तियों के संघात के कारण भारतीय समाज में संयुक्त परिवारों की संरचना में भी परिवर्तन आया है जैसे आकार में परिवर्तन, कर्ता की सत्ता का हास, स्त्रियों की शक्ति में वृद्धि, पारिवारिक संबंधों में परिवर्तन, सामूहिकता के साथ एकजुटता से परिवार में निवास करने के तत्वों की कमी आदि भी देखने को मिलती है कुछ विद्वानों के अनुसार संयुक्त परिवारों के कार्यों में भी परिवर्तन आया है। धार्मिक, आर्थिक सांस्कृतिक, मनोरंजनात्मक कार्यों में भी वृद्धि पाई जाती है।

पितृसत्तात्मक परिवार के पतन, विवाह को संविदा का हासित नियंत्रण पुरुष तथा स्त्री दोनों के संबंधों में परिवर्तन लैंगिक संबंधों की शिथिलता होने के साथ परिवार के आकार का छोटा होना अप्रधान कार्यों का पृथक्करण सामाजिक मूल्यों का हास आदि प्रमुख समस्याएं संयुक्त परिवारों के बदलने या परिवर्तित होने से समाज में सामने उभर के आ रही है।

तनाव तथा अनुकूलन : क्या वास्तव में लोगों की मूल्यों में परिवर्तन आ रहा है?

हमारे समाज में संयुक्त परिवार पूर्ण रूप से कभी भी एकाकी परिवार में नहीं बदलेगा। दोनों ही संरचनाएँ (संयुक्त एवं एकाकी) जारी रहेगीं संयुक्तता का स्वरूप दो या तीन पीढ़ियों से कम होकर एक पीढ़ी तक ही सिमट कर रह जाएगा।

गत कुछ दशकों से हमें भारतीय परिवार में अनेक प्रवृत्तियाँ दिखाई दी हैं जैसे परिवार नियंत्रण से बच्चों की अधीनता में कमी, युवाओं के मूल्यों में परिवर्तन, एकाकी परिवार के बढ़ने से सामाजिक विघटन, संस्कृति, शैक्षणिक, मनोरंजनात्मक, संरक्षात्मक, अन्य संस्थाओं को स्थानान्तरित किया जाना है।

अंतरपीढ़ीय संघर्ष और युवा संतोष : एक विशिष्ट सामाजिक श्रेणी के रूप में युवा अधिकतर एक आधुनिक घटना है। जीवन की यह अवस्था बचपन, किशोर और कार्य के बीच लंबे और सदा विस्तृत होने के कारण पैदा होती है।

बीवी साहा 1964 का बड़ौदा विश्वविद्यालय के 200 छात्रों पर किया गया अध्ययन यह दर्शाता है कि युवक अपने जीवनसाथी के चुनाव में पूर्ण आजादी नहीं चाहते हैं। अधिकांश युवा अपने माता–पिता से ही सलाह लेकर अपना भविष्य तय करते हैं। युवकों का परंपरागत प्रतिमानों के प्रति

लगाव तथा उनसे कम विचलन की स्थिति को दर्शाता है। कुछ वैधानिक उपायों ने भी माता–पिता तथा बच्चों के बीच संबंधों में दरार पैदा की है माता–पिता अपने बच्चों को अपनी संपत्ति में से हिस्से से वंचित नहीं कर सकते। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 के अनुसार बिना वसीयत किए मरने वाले हिंदू पुरुष की संपत्ति का अधिकारांतरण विशिष्ट उत्तराधिकारियों को होगा।

दूसरी ओर ऐसे मामले भी हैं जहाँ बच्चे संपत्ति के मामले में अपने माता पिता पर मुकदमा दर्ज करा देते हैं जिसके कारण बच्चे मदिरापान, नशे की आदत आदि के शिकार हो जाते हैं और असुरक्षा की भावना से पीड़ित रहते हैं। परिवार सामाजिक नियंत्रण के अभिभावक के रूप में प्रभावी भूमिका निर्वाह करने में असफल हो रहा है।

भारत में संयुक्त परिवार का भविष्य

संयुक्त परिवार में होने वाले अनेक परिवर्तनों के कारण प्रश्न पैदा होता ही है कि क्या संयुक्त परिवार भविष्य में समाप्त हो जाएंगे या उनका पूर्णतः विघटन हो जाएगा।

कुछ विद्वानों की मान्यता है कि संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा है और धीरे धीरे यह समाप्त हो जाएगें। जबकि कुछ अन्य विद्वानों ने इसे अस्वीकार किया है। उनका यह मानना है कि संयुक्त परिवारों का विघटन नहीं वरन् रूपांतरण है, नवीन परिस्थितियों से अनुकूलन है।

भारत में ज्यों ज्यों औद्योगीकरण एवं नगरीकरण बढ़ेगा तथा यातायात के नवीन साधनों का विकास होगा त्यों–त्यों संयुक्त परिवार का विघटन होगा और एकाकी परिवार में वृद्धि होगी जैसे यूरोप में हुई। फिर परिवर्तन तो एक स्वाभाविक नियम है। अतः परिवर्तन लाने वाले कारकों द्वारा इसका विघटन होगा ही, उसे रोका नहीं जा सकता है।

अनेक समाज–शास्त्रियों के अनुसार एकाकी परिवार और औद्योगीकरण के बीच सकारात्मक संबंध नहीं पाया जाता है परिवार एक संस्था के रूप में अधिक अनुकूलन प्रदर्शित करता रहा है।

भारत में संयुक्त परिवार का भविष्य वृद्ध संरचनात्मक परिवर्तनों और स्थानीय स्तरों पर परिवार और उसके साथ जुड़े हुए व्यवहारों पर उनका प्रभाव भी निर्भर है। संयुक्त परिवार का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि परिवार में झगड़े, तनाव, दबाव और मनमुटाव का हल किस प्रकार ढूंढा जाता है।

कपाड़िया यह मानते हैं कि हिंदू मनोवृत्तियाँ आज भी संयुक्त परिवार के पक्ष में हैं। स्पष्ट है कि भारत में संयुक्त परिवार का भविष्य धुंधला नहीं है। यद्यपि समय के साथ इसमें अनेक परिवर्तन हुए हैं जो इसके विघटन के नहीं वरन् रूपांतरण के सूचक हैं। हम केवल यह मानते हैं कि गत कुछ दशकों के अनुमति प्रधान एवं लोकतांत्रिक आदर्श परिवार और समाज के भीतर दोनों जगह नियंत्रण बनाए रखने के साधन के रूप में शारीरिक दंड की विश्वसनीयता में कमी आयी है। समाज में कुछ तुलनात्मक विस्तृत परिवर्तनों के बिना परिवार के भीतर अनुशासन के अधिक परंपरागत स्वरूपों के विस्तृत पैमाने पर पूर्ववृत होने की कल्पना कठिन है।

सारांश में हम कह सकते हैं कि संयुक्त परिवार निरंतर परिवर्तित होता रहा है, परंतु जीवित है और प्रायः अनुकूलन की परिवर्तित क्षमताओं के साथ उभर कर आया है।

संदर्भ

1. मिश्रा, राजन. (2006). "नातेदारी, विवाह एवं परिवार". एस० आर० साइंटिफिक पब्लिकेशन. पृष्ठ **96.**

2. पांडे, एस०एस०. "समाजशास्त्र". टाटा मैंग्रेव्हील. पृष्ठ **9.11–9.12.**
3. कार्वे, इरावती. (1953). "भारत में नातेदारी व्यवस्था". एशिया पब्लिशिंग हाउस. पृष्ठ **10.**
4. गुप्ता, एम०एल०., शर्मा, डी०डी०. "समाजशास्त्र". साहित्य भवन पब्लिकेशन. पृष्ठ **200,204,208.**
5. सचदेव, डी०आर०., विद्याभूषण. "समाजशास्त्र के सिद्धांत". किताब महल. पृष्ठ **322.**
6. आहूजा, राम. (2000). "भारतीय समाज". रावत पब्लिकेशन. पृष्ठ **95–98.**
7. अग्रवाल, जी०के०. (2011). "समाज शास्त्र परिचय". एस०बी०पी०डी० पब्लिशिंग हाउस. पृष्ठ **105–106.**
8. कपाड़िया, के०एम०. (1955). "भारत में विवाह एवं परिवार". ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. देसाई, आई०पी०. (1956). "भारत में संयुक्त परिवार एक विश्लेषण". सोशियोलॉजिकल बुलेटिन. पृष्ठ **148.**
10. प्रभु, पी०एच०. (1995). "हिन्दू सोशल ऑर्गेनाइजेशन". पॉपुलर पब्लिकेशन।
11. आगबर्न, एवं नीमकॉफ. (1953). "ए हैंडबुक ऑफ सोशियोलॉजी''. आई०एस०बी०एन० पब्लिकेशन. पृष्ठ **183.**
12. पेट्ररिया, ओवेरिया. (1993). "फैमिली एंड मैरिज इन इंडिया". न्यू दिल्ली ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
13. महाजन., महाजन. (2009). "सोशियोलॉजी ऑफ फिनशिप". "मैरिज एंड फैमिली". विवेक प्रकाशन. पृष्ठ **188–190.**
14. शर्मा, जी०एल०. (2015). "सामाजिक मुद्दें". रावत पब्लिकेशन. नं0–5.
15. कोतवाल, निधि., प्रभाकर, भारती. (2009). "एकल माताओं द्वारा पेश आ रहीं समस्याएं". जनरल ऑफ सोशल साइंस वॉल्यू–21. पृष्ठ **197–200.**